ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

श्री गुरु ग्रंथ साहेब की सम्पादन का पूर्ण वृत्तांत

लेखक : स. जसबीर सिंघ

क्रांतिकारी गुरु नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Website : www.sikhworld.info

नोटः यहां दी गई सारी जानकारी लेखक के अपने निजी विचार हैं। यह जरूरी नहीं कि सभी लेखक के विचारों से सहमत हों।

१ओंकार सतिगुर प्रसादि

श्री गुरू ग्रंथ साहेब की सम्पादन का पूर्ण वृत्तांत

गुरू पदवी के लिए आदेश

एवं

श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी का सचखण्ड गमन

भूमिका

सिक्ख जगद् के वर्तमान सत्‌गुरू जी (श्री गुरू ग्रंथ साहेब) की तृतीय शताब्दी [तीन सौवी (300)] वर्षगांठ के पुनीत अवसर पर समस्त विश्व के बुद्धिजीवियों के हृदय में जिज्ञासा उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है।

1. वह कौन सी प्रस्थितियां थी जिस में अति आधुनिक विचारधारा वाले एक महान ग्रंथ की उत्पत्ति हुई?
2. क्या इस ग्रंथ में सम्पूर्ण जगद् को बन्धुत्व की भावना में पिरोने की क्षमता है जिसका दावा किया जाता है?
3. इस ग्रंथ में वे कौन–कौन से सुत्र है जो मानवता की विविधता को एकता व प्रेम में बदल सकते हैं?
4. यह ग्रंथ किस प्रकार वैज्ञानिक युग की ज्वलंत समस्याओं का समाधान अपने में समाए हुए है?
5. इस ग्रंथ में 'शब्द गुरु' (ज्ञान) के अलौकिक सिद्धांत ने किस प्रकार मानव समाज को नई दिशा प्रदान की है?
6. इस ग्रन्थ की निराकार पारब्रह्म परमेश्वर, दिव्य ज्योति को इष्ट मानने की प्रणाली ने किस प्रकार सहज व सरल विधि द्वारा आध्यात्मिक प्राप्तियां सम्भव कर दी है?
7. भटकते हुए प्राणियों को शांति प्रदान करने के लिए, इस ग्रन्थ में अन्य सम्प्रदायों के धार्मिक ग्रन्थों की अपेक्षा क्या–क्या तुल्नात्मक विशेषताएं है?
8. इस ग्रंथ की वाणी जाति–पांति प्रथा से ऊपर उठकर, वर्ण–आश्रम विहीन समाज के स जन में सहायक होकर, किस प्रकार समद ष्टि का प्रचार–प्रसार करती है?
9. इस ग्रंथ में ग हस्थ आश्रम को सर्वश्रेष्ठ क्यों माना गया है?
10. यह ग्रंथ व्यक्ति विशेष के रूप में द ष्टमान न होकर भी एक व्यक्ति विशेष के रूप में क्यों पूजनीय तथा मान्य है?

इत्यादि।

तो लीजिए पढ़िये श्री गुरू ग्रंथ साहब के सम्पादन का पूर्ण वृत्तांतः–

पण्डित विश्वम्बर दत्त जी

श्री गुरू अर्जुन साहिब जी के दरबार में विश्वम्बर दत्त नामक पण्डित जी अपने पुत्र सहित कांशी नगर से पधारे। गुरूदेव ने उनको एक विद्वान जान कर आदर दिया। पण्डित जी ने गुरूदेव से निवेदन किया कि वे अपने यहां कुछ दिन शास्त्रों की कथा करने का अवसर प्रदान करें। गुरूदेव ने तुलनात्मक **दृष्टि** से संगत को जानकारी मिले इस विचार से अनुमति प्रदान कर दी। पण्डित जी नित्य प्रति गरूड़ पुराण की कथा करने लगे। संगत प्रतिदिन गुरुमति विचारधारा का ज्ञान श्रवण करती थी अतः उन्हें पण्डित जी द्वारा सुनाई जा रही कथा गुरुमति विरोधी और अवैज्ञानिक लगती। कई सिख तो कथा के प्रसंगो पर अनेक संशय व्यक्त करते और कई असमान्य संदर्भो पर हँस देते। इस पर पण्डित जी खीज उठे। उनके पास सिखों के तर्को का कोई उचित उत्तर होता नहीं था। वह केवल यह कह कर संगत को समझाने का असफल प्रयास करते कि शास्त्रों की बातों पर शंका करना उचित नहीं इनको जैसा है वैसा समझकर मान लेना चाहिए।

पण्डित विश्वम्बर दत्त जी, सिक्खों के विवेक पूर्ण तर्को के सामने टिक नहीं सके और परिहास का कारण बन गये। अतः उन्होंने गरूड़ पुराण की कथा बीच में ही समाप्त कर दी। वह गुरूदेव से आज्ञा लेने लगे कि वह अपने निवास स्थान कांशी से कुछ अन्य ग्रंथ मंगाना चाहते हैं और फिर उनकी कथा प्रारम्भ करेंगे। जिससें यहां कि स्थानीय संगत संतुष्ट हो सकेगी। गुरूदेव ने आज्ञा

दे दी। पण्डित जी ने अपने पुत्र पिताम्बर दत्त को कांशी भेजने का फैसला किया। उसने गुरूदेव से रास्ते के खर्च के लिए भारी राशि ली और शुभ मुहूर्त निकाल कर सभी प्रकार के पूजा–पाठ इत्यादि किये फिर वह अपने पुत्र को नगर से बाहर तक छोड़ने के लिए चले गये। इतने में रास्ते में एक गधे ने रेंगना शुरू कर दिया। तभी पण्डित जी ने इस बात को अपशकुन मान लिया और बाप–बेटा दोनों लौट आये।

पण्डित जी का लड़का रास्ते में से ही लौट आया है यह जानकर गुरूदेव ने पण्डित से इस का कारण पूछा। पण्डित जी ने बताया कि, ''मैंने तो समस्त ग्रह–नक्षत्रों का ध्यान रखकर शुभ मुहूर्त निकाला था किन्तु रास्ते मे एक गधे के रेंगने से अपशकुन हो गया अतः हम लौट आये। यह स्पष्टीकरण सुनकर संगत में सभी हँसी के मारे लोट–पोट होने लगे। गुरूदेव ने पूछा – पण्डित जी एक गधे का रेंगना क्या तुम्हारे शुभ–मुहूर्त और पूजा–पाठ से ज्यादा बलशाली है। गधे का रेंगना तो एक सहज क्रिया है, क्या यह पूजा–पाठ की शक्ति को काट सकता है? यदि तुम्हें अपनी पूजा–पाठ पर इतना भी भरोसा नहीं तो तुम्हारी सुनाई कथा पर कोई क्या भरोसा करेगा। इस प्रश्न का उत्तर पण्डित जी को नहीं सूझा, वह अपना सा मुंह लेकर बैठ गए। गुरूदेव ने संगत को सम्बोधन किया और कहा – गुरू नानक देव जी का पंथ इन निरर्थक कर्म–काण्डों से ऊपर है। आओ! तुम्हें उसका एक व्यवहारिक रूप दिखाएं। उन्होनें एक सिख को बुलाया और उसे कहा कि आप संगला दीप (श्री लंका) जाओं'', वहां पर श्री गुरू नानक देव जी की एक पोथी है, हमें बाबा बुड्ढ़ा जी ने बताया है कि वहां के स्थानीय बौद्ध भिक्षुकों के साथ गोष्टी के रूप में संग्रह की गई है। उसे ले आओं। सिख ने तुरन्त गुरूदेव को सत्य वचन कहा और शीश झुका प्रस्थान करने लगा। गुरूदेव ने पूछा रास्ते के लिए कोई खर्च इत्यादि की आवश्यकता हो तो बताओं। सिख ने उत्तर दिया आप का आर्शीवाद सदा साथ है। जहां भी मैं पहुँचूगां वहां आपके सिख मेरी हर प्रकार से सहायता करेंगे। आपके सिक्ख समस्त भारतवर्ष में जो फैले हुए हैं। गुरूदेव ने उसे आशीर्वाद देकर विदा किया।

गुरूदेव का यह विशेष दूत लगभग तीन माह में संगला दीप पहुंचा। वहां के स्थानीय नरेश को जब मालूम हुआ कि श्री गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी श्री गुरू अर्जुन देव जी ने श्री गुरू नानक देव के संबंध में लिखी गई पुस्तके मंगवाई है तो उन्होने सिख के स्वागत सत्कार में कोई कसर नहीं रहने दी। संगला दीप के तत्कालीन शासक ने अपने सभी पुस्तकालयों में जाचं करवाई किन्तु नानक देव जी द्वारा रचित गोष्टी की पोथी नहीं मिली, वह कहीं गुम हो चुकी थी। विकल्प में नरेश ने बौद्ध भिक्षुकों द्वारा रचित एक पुस्तक जिसका नाम प्राण संगली था, उस सिख को दे दी । इस पुस्तक मे बौद्ध भिक्षुकों द्वारा प्राणायाम करने की विधियां इत्यादि लिखी थी। वह पुस्तक देकर नरेश ने सिख को विदा किया और श्री गुरू अर्जुन देव जी के नाम एक पत्र दिया जिस में उसने क्षमा याचना की थी कि वह उनकी धरोहर (अमानत) को सुरक्षित न रख सका जिसका उसे खेद है।

वह सिख, उस पुस्तक को लेकर लगभग छः माह में लोट आया। गुरूदेव ने वह पत्र पढ़ा और उस पुस्तक को जांचा तो पाया कि वह रचना श्री गुरू नानक देव जी की विचार धारा के विपरीत थी अतः उस पुस्तक का उनके लिए कोई महत्त्व नहीं। इस पर उस पुस्तक को गुरूदेव ने अग्नि भेंट कर दिया और उसकी राख ब्यासा नदी में जल प्रवाह करवा दी।

आदि बीड़ (ग्रन्थ साहेब) का संकलन

श्री गुरू अर्जुन देव जी के दरबार में कुछ श्रद्धालु सिक्ख हाजिर हुए और वे विनती करने लगे कि गुरूदेव जी! आप द्वारा रचित अथवा पूर्व गुरूजनों द्वारा रचित वाणी का जब हम पठन करते हैं तो मन को बहुत शान्ति मिलती है परन्तु इसके विपरीत आपके भ्राता श्री प थ्वीचन्द अथवा उनके पुत्र मिहरबान द्वारा रचित काव्य मन को चँचल कर देता हैं अथवा अभिमानी बना देता हैं। इसका क्या कारण है?

यह प्रश्न सुनकर गुरूदेव गम्भीर हो गये और कुछ समय मौन रहने के पश्चात् उत्तर दिया। ''तीसरे गुरू श्री अमरदास जी इस बात का निर्णय समय से पहले ही कर गये हैं। उनका कथन है कि जो मनुष्य अपने अस्तित्व को मिटा दे और उस प्रभु में अभेद हो जाए अर्थात सत्य में समा जाये, और वह अपना अनुभव ज्ञान जिज्ञासुओं को दे, भले ही वह ज्ञान पद्य अथवा गद्य में हो। यह अनुभव ज्ञान उस असीम प्रभु मिलन से उत्पन्न होता है, ऐसा ज्ञान जन–साधारण का कल्याणकारी बन जाता है। इसके विपरीत जो मनुष्य केवल स्वांग रचकर गुरू डंम का आडम्बर करते हैं, त ष्णाओं से ग्रस्त रहते हैं और अपने मन पर विजय प्राप्त नहीं करते, उनके द्वारा रचित काव्य अथवा उपदेश श्रद्धालुओं पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं डालते क्योंकि उनकी कविता केवल अनुमान और कोरे ज्ञान पर आधारित होती है, अनुभव ज्ञान पर नहीं।'' गुरूदेव ने ऐसी रचनाओं को कच्ची वाणी बताया है और कहा है कि जो स्वयं कच्चे (अपरिपक्व) लोग हैं, वे परिपूर्ण परब्रह्म परमेश्वर की क्या स्तुति करेंगे?

सति गुरू बिना होर कची है वाणी।
वाणी त कची सतिगुरू बाझहु होर कची बाणी।
कहदे कचे सुणदे कचे कची आखि वखाणी।

यह उत्तर सुनकर श्रद्धालु सिक्ख सन्तुष्ट हो गये, परन्तु उन में से एक ने पूछा – 'गुरूदेव! हम जन–साधारण लोग, कच्ची

और पक्की वाणी में कैसे भेद करेंगे?' पास में बैठे भाई गुरूदास जी ने गुरूदेव जी से आज्ञा ले कर इस प्रश्न का उत्तर देने लगे – कि जैसे बहुत से मनुष्य किसी कमरे में बैठे वार्तालाप कर रहे हों, दूसरे कमरे में बैठी स्त्रियाँ फिर भी अपने–अपने पतियों की आवाज पहचान लेती हैं, ठीक इसी प्रकार गुरुसिक्ख अपने गुरू की वाणी को पहचान जाते हैं। जिज्ञासु सिक्खों ने पुनः संशय व्यक्त किया और कहा – आप ठीक कहते हैं। परन्तु भविष्य में साधारण जिज्ञासु भ्रमित किये जा सकते हैं। जैसे आपके भतीजे मिहरबान कुछ कवियों की सहायता ले कर वाणी रचने का प्रयास कर रहे हैं। वास्तव में वह आप की छत्र–छाया में रहने से गुरमति सिद्धान्तों की जानकारी रखते हैं। इसलिए उनका किया गया छल किसी समय बहुत बड़ा धोखा कर सकता है क्योंकि वे अपनी कच्ची वाणी में 'नानक' शब्द का प्रयोग कर रहे हैं।

गुरूदेव जी ऐसी शंका सुनकर बहुत गम्भीर हो गये और कहने लगे कि बहुत समय पहले जब वे लाहौर अपने ताऊ श्री सिहारीमल जी के निमंत्रण पर उनके बेटे के शुभ विवाह पर गये थे, तब उन्हें वहाँ के स्थानीय पीरों फकीरों से मिलने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ। उनसे संगत करने के पश्चात् उनके हृदय में यह इच्छा उत्पन्न हुई थी कि एक ऐसा आध्यात्मिक ग्रन्थ दुनिया के लिए रचा जाना चाहिए जो बिना भेदभाव के समस्त मानव समाज के लिए कल्याणकारी हो। अब वह समय आ गया है। अतः तन, मन और धन से इस प्रयोजन हित जुट जाना चाहिए।

गुरूदेव जी ने अपने हृदय की बात प्रमुख शिष्य–भाई गुरदास जी, बाबा बुड्ढा जी तथा भाई बन्नों जी को संबोधित करके कही – अब हरिमन्दिर साहिब तैयार हो चुका है, जैसे कि हमारा इष्ट निराकार पारब्रह्म परमेश्वर है, हम केवल अकाल पुरख के उपासक हैं और उसी की पूजा करते हैं। अतः हम चाहते हैं कि हरिमन्दिर में केवल और केवल उस सच्चिदानंद परमपिता परमेश्वर की ही स्तुति हो और ऐसे महान ग्रंथ का सम्पादन किया जाये जिसमें उन महापुरूषों तथा पूर्व गुरूजनों की वाणी का संग्रह हों, जो प्रभु में एकाकार हो चुके हैं अथवा उस से साक्षात्कार कर चुके हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि ऐसे निरपेक्ष ग्रन्थ के संकलन से समस्त मानव जाति एवं भक्तजनों को परमेश्वर के गुणगान करने की प्रेरणा मिलेगी, वहीं इस संकलित वाणी के पठन–पाठन एवँ श्रवण से समस्त मानव समाज के जिज्ञासुओं का उद्धार होगा। यह विचार अत्यन्त अलौकिक एंव अभूतपूर्व था। अतः भाई गुरदास जी, बन्नों जी, बाबा बुड्ढा जी और सिख संगत को बहुत पसन्द आया। गुरूदेव जी के सुझाव अनुसार एक विशेष स्थान का निर्माण प्रारम्भ कर दिया गया, जहाँ एकान्त में बैठ कर नये ग्रन्थ का सम्पादन किया जा सके। इस कार्य के लिए भाई बन्नों जी ने अपनी सेवाएं गुरूदेव जी को समर्पित की। उन्होंने पेयजल अथवा स्नान इत्यादि के लिए जल की व्यवस्था करने के लिए एक तालाब बनवाया, जिसका नाम रामसर रखा। इस सरोवर के किनारे तम्बू लगाये गये। इस बीच गुरूदेव स्वयँ सामग्री जुटाने में व्यस्त हो गये। कागज़, स्याही इत्यादि का प्रबन्ध करने के पश्चात् उन्होंने अपने पूर्व गुरूजनों की वाणी जो कि उन्हें धरोहर के रूप में पिता गुरूदेव श्री गुरु राम दास जी से प्राप्त हुई थी, अम तसर से रामसर के एकान्तवास में ले आये। जब सब तैयारी सम्पूर्ण हो गई तो आपने ग्रन्थ को प्रारम्भ करने के पूर्व संगत जुटाकर प्रभु चरणों में कार्य सिद्धि के लिए प्रार्थना की और प्रसाद बाँटा, तभी सँगत में से एक सिक्ख ने सुझाव दिया कि ग्रन्थ का शुभारम्भ किसी महान विभूति से करवाया जाना चाहिए। गुरूदेव जी ने यह सुझाव तुरन्त स्वीकार कर लिया। अब समस्या यह उत्पन्न हुई कि वह महान विभूति कौन है जिस से यह कार्य प्रारम्भ करवाया जाये। बहुत सोच विचार के पश्चात् संगत में से प्रस्ताव आया कि आप अपने मामा मोहन जी से ग्रन्थ का शुभारम्भ करवायें क्योंकि वह आप के नाना, पूर्व गुरूजन के सुपुत्र हैं तथा वह एक महान तपस्वी भी हैं। गुरूदेव जी ने सहमति प्रकट की और उनको रामसर आने का न्यौता बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरूदास जी के हाथ भेजा।

जब गुरूदेव जी का यह प्रतिनिधि मण्डल गोइंदवाल बाबा मोहन जी के ग ह पहुँचा तो वह उस समय पद्म आसन में सहजयोग के माध्यम से तपस्या में लीन थे। उनकी समाधि किसी ने भी भंग करनी उचित नहीं समझी। अतः सभी लौट आये। इस पर गुरूदेव जी स्वयँ उनको आमन्त्रित करने के लिए गोइंदवाल (साहेब) पहुँचे। जब उन्होंने भी पाया कि बाबा मोहन जी की सुरति प्रभु चरणों में जुड़ी हुई है तो उन्होंने युक्ति से काम लिया। वह जानते थे कि श्री मोहन जी कीर्तन के रसिया हैं। वह प्रभु स्तुति सुनकर अवश्य ही चेतन अवस्था में लौट आयेंगे। अतः उन्होंने प्रभु स्तुति में अपने प्रतिनिधि मण्डल सहित कीर्तन करना प्रारम्भ कर दिया। कीर्तन की मधुर धुनों व वचनों से बाबा मोहन जी की समाधि टूट गई। वह संगीतमय वातावरण देखकर अति प्रसन्न हुए और वे प्रभु स्तुति सुनकर मंत्रमुग्ध हो गये। उन्होंने, श्री गुरू अर्जुन देव को आशीष दिया और कहा – 'बताओ, क्या चाहते हो?' गुरूदेव जी ने अपने आने का प्रयोजन बताते हुए कहा – 'हमने निर्णय लिया है कि एक ऐसे ग्रन्थ का सम्पादन न किया जाए, जिसमें पूर्व गुरुजनों के अतिरिक्त उन महापुरूषों अथवा भक्तजनों की बाणी भी संग हीत की जाए जो केवल एकेश्वर को भजते थे और जिन्हें उस परम ज्योति का साक्षात्कार हुआ है, जिससे समस्त मानव समाज का कल्याण हो सके। अतः हम चाहते हैं कि इस ग्रन्थ का मंगला चरण आप लिखें। उत्तर में बाबा मोहन जी ने कहा – आप का आशय तो बहुत ही उत्तम है किन्तु जब हम से भी बुजुर्ग यहाँ मौजूद हों तो यह कार्य मुझे शोभा नहीं देता। अतः आप श्री गुरू नानक देव जी के ज्येष्ठ पुत्र श्री चन्द जी के पास जाओ। बात में तथ्य था। इसलिए गुरूदेव जी ने तुरन्त सुझाव स्वीकार कर लिया परन्तु विनती की कि आप भी अपनी वाणी इस ग्रन्थ के लिए हमें दें। इस पर बाबा मोहन जी ने उत्तर दिया – जैसा कि आप जानते ही हैं कि आपके नाना गुरू अमर दास जी की रचनाओं

को हमारे भतीजे संतराम जी लिपिबद्ध किया करते थे। उन्होंने अपने भाई श्री सुन्दर जी की बाणी संग्रह की हुई है, जो उन्होंने अपने दादा श्री गुरू अमर दास जी के देहावसान पर उच्चारण की थी। यदि आप चाहते हैं तो उन से मिले और वह बाणी एकत्र कर लें। गुरूदेव सत्य वचन कह कर श्री सुन्दर जी से मिले और उनसे उनकी रचनाएं प्राप्त कर ली।

गुरूदेव जी बाबा मोहन जी के सुझाव को ध्यान में रखते हुए अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए गोइंदवाल से बाबा श्री चन्द जी के निवास स्थान गांव बारठ के लिए प्रस्थान कर गये। वहाँ उन्होंने बाबा श्रीचन्द जी को अपने आने का प्रयोजन बताया। श्रीचन्द जी प्रयोजन सुनकर अति प्रसन्न हुए और उन्होंने श्री अर्जुन देव जी से आग्रह किया कि आप क पया अपनी रचनाएं सुनाएं। इस पर गुरूदेव जी ने 'सुखमनी साहब' शीर्षक वाली रचना सुनानी प्रारम्भ की। श्री चन्द जी 'सुखमनी साहब' के पठन के मध्य में ही आत्म–विमुग्ध हो गये और उन्होंने कहा – आप की बाणी विश्वभर में आध्यात्मिक जगत में प्रथम स्थान पर मानी जायेगी। भक्तजनों में अति लोकप्रिय होगी और समस्त मानव समाज के लिए हितकारी होगी। इस आशीष के मिलने पर गुरूदेव जी ने उनसे आग्रह किया कि क पया आप भी अपनी बाणी हमें दें, जो हम उसे इस नये ग्रन्थ में संकलित कर लें। इस पर श्रीचन्द जी ने उत्तर दिया कि आप श्री गुरू नानक देव जी की गद्दी पर विराजमान हैं। यह बाणी रचने का अधिकार केवल आप को ही है क्योंकि आप नम्रता के पुंज हैं। अतः हम आपसे इस कार्य के लिए क्षमा चाहते हैं। इस पर गुरूदेव जी ने श्री चन्द जी से फिर विनम्र आग्रह किया कि आप केवल ग्रन्थ का अपने कर–कमलों से शुभ आरम्भ करें। तब बाब श्री चन्द जी ने पुनः कहा – जैसा कि मैं पहले स्पष्ट कर चुका हूं इस समय श्री गुरू नानक देव जी के आप विधिवत उत्तराधिकारी है। अतः हमारी द ष्टि में आपसे सर्वश्रेष्ट मनुष्य (महान विभूति) ओर कोई हो ही नहीं सकता। इसलिए यह पुनीत कार्य आप स्वयं ही अपने कर–कमलों से करें, यहीं हमारी इच्छा है। बाबा श्री चन्द जी के आग्रह पर, श्री गुरू अर्जुन देव जी ने कलम उठाई और श्री गुरू नानक देव जी द्वारा रचित वाणी 'जपुजी साहब' के मूल मन्त्र को उन कोरे काग़ज़ों पर मंगला चरण के रूप में लिख लिया, जो कि उस सच्चिदानंद अथवा दिव्य ज्योति की परिभाषा है।

१ओंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैर अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि।

गुरूदेव मंगला चरण लिखकर अम तसर लौट आये और उस स्थान पर पहुँचे जहाँ भाई बन्नों जी एकान्तवास में एक सरोवर निर्माण कर उसके किनारे शमियाने लगाकर उस शिविर में प्रतीक्षा कर रहे थे। अब गुरूदेव के समक्ष दो लक्ष्य थे –एक दूर प्रदेशों से आई संगत को निवाजना (सन्तुष्ट अथवा क त्तार्थ करना) तथा दूसरा था – एकान्तवास में आध्यात्मिक दुनिया को एक नया और सरल भाषा में ग्रन्थ उपलब्ध करवाना जो निरपेक्ष, सर्वभौतिक, सर्वकालीन और सर्व मानव समाज के लिए संयुक्त रूप में हितकारी और कल्याणकारी हो।

गुरूदेव जी ने बाबा बुड्ढा जी को आदेश दिया कि आप अम तसर में ही रहें। वहाँ दूर–प्रदेशों से आई संगतों को निवाजे और हमारी कमी उन्हें महसूस न होने दें। ध्यान रहे कि हमारे एकान्तवास में कोई विघ्न उत्पन्न नहीं होना चाहिए, ताकि हम ग्रन्थ के सम्पादन में एकाग्र हो सके।

गुरुदेव जी ने मुख्य लक्ष्य को ध्यान में रखकर नये ग्रन्थ का सम्पादन करने के लिए, भाई गुरुदास जी को इस का उत्तरदायित्व सौंपा। भाई गुरुदास जी ने तत्कालीन उत्तरप्रदेश के काफी बड़े क्षेत्र में गुरमति प्रचार की सेवा की थी। आप उच्च कोटि के विख्यात विद्वान थे। आप हिन्दी, ब्रज, पंजाबी, फारसी भाषाओं का गहन अध्ययन प्राप्त व्यक्तित्त्व के स्वामी थे। आपने स्वयँ भी बहुत से काव्य रचे जो कि आज सिक्ख जगत में अति लोकप्रिय हैं। उन दिनों आप जी को गुरूबाणी का श्रेष्ठ व्याख्याकार माना जाता था। कुल मिलाकर यदि यह कहा जाये कि आप काव्य कला, व्याकरण, भाषा, राग विद्या इत्यादि के महान पंडित थे तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

श्री गुरू अर्जुन देव जी ने वह समस्त महापुरूषों की ऐसी बाणी पहले से ही अपने पास संग्रह कर रखी थी, जिनका आशय अथवा सिद्धान्त पूर्व गुरूजनों से मेल खाता था अथवा उनके विचारों में गुरमति सिद्धान्त से कोई प्रतिरोध न था। वैसे श्री गुरू नानक देव जी ने अपनी प्रचार फेरी के समय जहाँ अपनी बाणी एक विशेष पोथी में लिखकर सुरक्षित कर ली थी, वहीं उन महापुरूषों की बाणी, जिनका आशय गुरूदेव की अपनी बाणी से मिलता था अथवा सैद्धान्तिक समानता थी, अपने पास एक अलग से पोथी में संकलित कर ली थी। आप ने जब अपना स्थाई निवास करतारपुर बनाया तो वहाँ आप इन पोथियों में संकलित बाणियों का प्रचार किया करते। जब आप जी ने अपना उत्तराधिकारी भाई लहणा जी को प्रतिष्ठित कर उनको श्री गुरू अंगद दूसरा गुरू नानक घोषित किया तो उन्हें वह समस्त बाणी जो उन्होंने स्वयँ उच्चारण की थी, और अन्य महापुरूषों की रचनाएं एकत्रित की थीं, एक धरोहर के रूप में उनको समर्पित कर दी। यह परम्परा इसी प्रकार आगे चलती ही चली गई और अन्त में चारों गुरूजनों की रचनाएं तथा अन्य भक्त, महापुरूषों की बाणी श्री गुरू राम दास जी द्वारा, श्री गुरू अर्जुन देव जी को धरोहर रूप में सौंप दी गई थी। इस समस्त वाणी का संकलन करने के लिए भाई गुरदास जी और स्वयँ गुरूदेव एक मन एकचित्त हो, तैयार बैठे थे।

गुरूदेव जी के समक्ष अब समस्त इकट्ठी की गई रचनाओं को नये सिरे से रागों के अनुसार क्रम देने तथा गुरूबाणी के शब्द जोड़ कर एक सार करने का कार्य था। इसके अतिरिक्त काव्य–छंदो की द ष्टि से समस्त वाणी व वर्गीकरण करना अति

आवश्यक लक्ष्य था। यह कार्य जहाँ अति परिश्रम का था, वहीं इसके लिए समय भी बहुत अधिक चाहिए था। अतः आप रात–दिन एक करके इस महान कार्य को सम्पूर्ण करने में व्यस्त हो गये। आपने उन्हीं रागों का चयन किया जो मन को स्थिर करके शान्ति प्रदान करने में सहायक सिद्ध हों। उन रागों को अपने ग्रन्थ में सम्मिलित नहीं किया, जिनके उच्चारण अथवा गायन से मन चँचल अथवा उत्तेजित होता है। आप जी ने सारी बाणी को 30 रागों में लिखवाया। तीस रागों के क्रमानुसार नाम इस प्रकार हैं –

श्रीराग, माझ, गउड़ी, आसा, गुजरी, देवगंधारी, बिहागड़ा, बडहंस, सोरठि, धनासरी, जैतसरी, टोडी, बैराड़ी, तिलंग, सूही, बिलावलु, गोंड, रामकली, नट नरायण, माली गउड़ा, मारू, तुखारी, केदारा, भैरउ, बसंत, सारंग, मलार, कानड़ा, कल्याण और प्रभाती।

इस ग्रन्थ में जिन शिरोमणि संतो और भक्तजनों के पदों का संकलन किया गया, वे इस प्रकार है : –

सर्वप्रथम पूर्व गुरूजनों की बाणी, तद्पश्चात उन की अपनी बाणी, फिर पन्द्रह भक्तजनों की बाणी, उसके बाद ग्यारह भट्ट कवियों की बाणी और अन्त में तीन गुरू सिक्खों की बाणी। इस प्रकार 34 महान विभूतियों की रचनाओं युक्त इस विशाल ग्रन्थ का सम्पादन हुआ। उन चौंतीस महान विभूतियों के नाम निम्नलिखित इस प्रकार हैंः–

1. श्री गुरू नानकसाहिब जी, 2. श्री गुरू अंगद साहिब जी, 3. श्री गुरू अमरदास जी, 4. श्री गुरू राम दास जी, 5. श्री गुरू अर्जुन साहिब जी।

भक्तजनों के नाम हैं – 6. भक्त श्री कबीर जी, 7. भक्त श्री नामदेव जी, 8. भक्त श्री रविदास जी, 9. भक्त श्री फरीद जी, 10. भक्त श्री त्रलोचन जी, 11. भक्त श्री वेणी जी, 12. भक्त श्री धन्ना जी, 13. भक्त श्री जयदेव जी, 14. भक्त श्री भीखन जी, 15. भक्त श्री सेण जी, 16. भक्त श्री सदना जी, 17. भक्त श्री पीपा जी, 18. भक्त श्री रामानन्द जी, 19. भक्त श्री परमानन्द जी, 20. भक्त श्री सूरदास जी।

भट्ट कवियों के नाम इस प्रकार हैं– 21. श्री कल्ह सहार जी, 22. श्री जाल्प जी, 23. श्री कीरत जी, 24. श्री सल्ल जी, 25. श्री भल्ल जी, 26. श्री नल्ल जी, 27. श्री भीखनं जी, 28. श्री गयंद जी, 29. श्री बल्ल जी और 30. श्री हरिबंस जी। 31. श्री मथुरा जी

इसके अतिरिक्त तीन सिक्खों के नाम इस प्रकार हैं – 32. श्री सुन्दर जी, 33. श्री सत्ता जी, 34. श्री बलवण्ड जी।

इस प्रकार एक विशाल आकार के ग्रंथ का स जन हुआ जिसका नाम आदि ग्रन्थ रखा गया।

नोट : कालान्तर में दशम पिता गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने धर्मप्रचार और आध्यात्मिक उत्थान के उद्देश्य से आदि ग्रंथ का पुनः लेखन कार्य भाई मनी सिंघ जी से करवाया। उन्होंने इसमें नौवें सतिगुरू गुरू तेगबहादुर जी की वाणी तथा एक अन्य राग जैजैवन्ती सम्मिलित किया। तद्यपि रचना सामग्री में कोई फेर बदल नहीं किया। इस नवीन संकलन को जहां उन्होंने ज्योति विलीन होने से पूर्व 'गुरू' उपाधि से अलंक त किया, वहीं इस का नया नाम करण करते हुए 'श्री गुरू ग्रंथ साहब' नाम देकर आदेश दिया कि ग्रंथ को प्रत्यक्ष गुरू मानो।

कुछ भक्तजनों की बाणी अस्वीकार

श्री गुरू अर्जुन देव जी रामसर नामक स्थान पर एकान्तवास में जब आदि ग्रन्थ साहब के सम्पादन का कार्य कर रहे थे तो उन दिनों आप से मिलने के लिए लाहौर नगर के कुछ भक्तजन विशेष रूप से आये। उनका मुख्य आशय था कि वे भी अपनी रचनायें उस नये ग्रन्थ में दर्ज करवा लें, जिसका सम्पादन गुरूदेव जी कर रहे थे। भक्तजनों के आगमन पर गुरूदेव जी ने उन सब का हार्दिक स्वागत करते हुए कहा–यदि आपकी वाणी हमारे प्रथम गुरूदेव श्री गुरू नानक देव जी की विचारधारा के अनुकूल होगी तो हम उसे अवश्य ही स्वीकार कर लेंगे अन्यथा ऐसा करना सम्भव न होगा। भक्तजनों में से श्री काहना जी, गुरू जी के अनुरोध पर अपनी रचनायें सुनाने लगे। उन्होंने उच्चारण किया–

मैं ओही रे, मैं ओही रे,
जाको नारद सारद सेवे, सेवे देवी देवा रे।
ब्रह्मा बिशन महेश अराधहि, सभ करदे जां की सेवा रे।

यह पद सुनकर गुरूदेव जी ने भक्त काहना जी से आदर पूर्वक कहा –'मुझे क्षमा करें। आपकी यह वाणी गुरू नानक की विचार धारा के अनुकूल नहीं हैं। क्योंकि इस रचना में अभिमान का बोध होता है, जबकि गुरू श्री नानक देव जी का दरबार विनम्रता का पुँज है। अतः इस ग्रन्थ में विपरीत विचारधारा को शामिल नहीं किया जा सकता।'

2. तद्पश्चात भक्त छज्जू जी ने अपनी वाणी गुरूदेव जी को सुनानी प्रारम्भ की –

कागद संदी पूतली तउ न त्रिया निहार।
इउ ही मार लै जाएगी, जिउं बलोचा की धाड़।

नारी की निन्दा सुनते ही गुरूदेव जी ने कहा – गुरू नानक देव जी के घर में ग हस्थ आश्रम को प्रधानता प्राप्त है। यहाँ पर संयम में रहना, सिख की पूंजी है, नारी समाज का महत्वपूर्ण अंग है। अतः यह वाणी गुरू सिद्धान्त से मेल नहीं खाती।

3. अब भक्त पीलो जी ने अपनी रचना का इस प्रकार उच्चारण किया –

पीलू असां नालो सो भले जंभदियां जो मूए।
ओनां चिकड़ पाव न डोबियां न आलूद भए।

गुरूदेव जी ने स्पष्ट किया कि जन्म–मरण तो प्रक ति का खेल है। हमें उन नियमों से सन्तुष्ट होना चाहिए। यदि हमारी भावनाएं उन नियमों के विरूद्ध होगी तो हम भक्त कदाचित नहीं हो सकते। अतः यह रचना भी गुरू श्री नानक देव जी के सिद्धान्त का सर्मथन नहीं करती, अतः यह अस्वीकार्य है। उन्हें गुरूमत सिद्धान्तों से अवगत कराते हुए यह रचना सुनाई।

दुखु नाही सभु सुखु ही है रे, ऐके एकी नेतै।
बुरा नहीं संभु भला ही है रे, हार नही सभ जेतै।

अन्त में भक्त शाह हुसैन जी ने अपनी वाणी उच्चारण की–

चुप वे अड़िआ, चुप वे अड़िआ।
बोलण दी नही जाय वे अड़िआ।
सजणा बोलण दी जाय नाही।
अंदर बाहर हिका सांई।
किस नूं आख सुणाई।
इको दिलबर सभि घट रविआ दूजी नहीं कढ़ाई।
कहै हुसैन फकीर निमाणा, सतिगुर तो बलि बलि जाई।

गुरूदेव जी ने श्री गुरू नानक देव जी के सिद्धान्त को इस प्रकार सुना कर बताया–

जब लग दुनीआ रहीऐ, किछु सुणीऐ, किछु कहीऐ।

अतः यह रचना भी हम स्वीकार नहीं कर सकते, क्योंकि सैद्धान्तिक मतभेद सभी जगह विद्यमान हैं।

इस पर भक्त काहना जी गुरूदेव से असहमत हो गये और अपने पक्ष में बहुत सी बातें बताने लगे कि वह पूर्ण पुरूष हैं, किन्तु गुरूदेव जी ने उन्हें अपना द ढ़ निश्चय बता दिया कि वे विरोधी विचारधारा को अपने ग्रन्थ में कोई स्थान नहीं देंगे। शेष तीनों भक्तजन शान्त बने रहे और उन्होंने गुरूदेव जी के निर्णय पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की और लौट गये। मार्ग में एक दुर्घटना में भक्त कान्हा की म त्यु हो गई।

भाई बन्नो जी द्वारा तैयार करवाई गई बीड़ (ग्रंथ)

भाई बन्नो जी जिला गुजरात पश्चिमी पँजाब की तहसील फालिया के एक गाँव मांगट के निवासी थे। वे श्री अर्जुन देव जी के अनन्य सिक्ख थे। जब श्री गुरू अर्जुन देव जी आदि ग्रन्थ साहिब का सम्पादन कार्य करवा रहे थे, उन दिनों भाई बन्नों जी की नियुक्ति (ड्यूटी) सभी प्रकार की देखरेख व आवश्यक सामग्री जुटाने की थी। जब गुरूदेव जी ने महसूस किया कि नया ग्रन्थ लगभग तैयार है तो उनके समक्ष एक ही प्रश्न था कि नये ग्रन्थ को श्री हरि मन्दिर में प्रकाशमान करने के पश्चात् इस ग्रन्थ की प्रतिलिपि तैयार करना असम्भव हो जायेगा। अतः समय रहते ही इस कार्य को भी साथ साथ कर लेना चाहिए। उन्होंने अपने ह्रदय की बात भाई बन्नो जी को बताई तो उन्होंने तुरन्त उन लिखने वालों को एकत्रित किया जो गुरूवाणी के गुटके अथवा पोथियां लिखकर संगत में वितरण किया करते थे। इन लोगों ने इस कार्य को अपनी जीविका का साधन बनाया हुआ था। पुरातन ग्रन्थों में इन की संख्या 12 बताई गई है। गुरूदेव जी ने, ग्रन्थ के वह भाग जो पूर्ण हो चुके थे, लिखने के लिए उन लोगों में बाँट दिये और प्रतिलिपि तैयार करने की आज्ञा दी। इन सभी लोगों ने यह कार्य लगभग डेढ़ मास में सम्पूर्ण कर दिया। जैसे ही मुख्य ग्रन्थ (आदि बीड) का कार्य सम्पन्न हुआ, गुरूदेव जी ने भाई बन्नो जी को आदेश दिया कि इन दोनों ग्रन्थों को लाहौर ले जायें और वहाँ से इनकी जिल्द बनवा कर लाये। भाई बन्नो जी ने ऐसा ही किया। दूसरी बीड़ जो कि 12 लिखारियों द्वारा लिपिबद्ध की गई थी, जाँचा तो उन्होंने पाया कि लिखारियों ने कुछ पद अपनी ओर से इसमें सम्मिलित कर दिये जो मूल ग्रन्थ में उन्होंने नहीं लिखवाये थे। इस बात को लेकर गुरूदेव जी बहुत अप्रसन्न हुए और उन्होंने संगत को सतर्क किया कि इस प्रकार यदि मूल वाणी से खिलवाड़ किया गया तो वह समय जल्दी आ जायेगा जब वाणी की प्रमाणिकता ही समाप्त हो जायेगी। अतः हम इस भाई बन्नो वाली बीड़ को मान्यता ही प्रदान नहीं करते ताकि आइंदा कोई ऐसी मनमानी हरकत न कर सके। आप जी ने वाणी में मिलावट को शुद्ध दूध में क्षार मिलाने वाली करतूत बताया। इस प्रकार भाई बन्नों वाली बीड़ का नाम 'खारी' बीड़ पड़ गया।

श्री हरिमन्दिर साहेब में आदि बीड़ (गुरू ग्रन्थ) साहेब का प्रकाश

जब आदि बीड़ के सम्पादन और लिखाई का कार्य सम्पूर्ण हो गया तो मंसदों (मिशनरियों) के माध्यम से आसपास के क्षेत्रों में गुरूदेव जी ने संदेश भिजवाये कि हम गुरुवाणी के नये ग्रन्थ को भादों शुक्ल प्रतिपदा संवत 1661 बि॰ तदानुसार 30 अगस्त 1604 ईस्वी को विधिवत् प्रतिष्ठित करेंगे। अतः समस्त संगत उपस्थित हो। भाई बन्नो जी ने ऐसा ही किया और समय अनुसार रामसर लौट आये। गुरूदेव जी ने बाबा बुड्‌ढा जी के सिर पर (मूल) 'आदि ग्रन्थ' को उठवाकर नंगें पाँव पैदल श्री हरिमन्दिर साहब के लिए चलने का आदेश दिया और स्वयँ पीछे पीछे चंवर करते हुए चलने लगे। समस्त संगत ने हाथ में साज लिये और साथ साथ शब्द गायन करने लगे – ***विचि करता पुरख खलोआ। वाल न विंगा होइआ।***

इस प्रकार वे आदि बीड़ की मूल प्रति को रामसर से अम तसर श्री हरिमन्दिर साहब में ले आये। गुरूदेव जी ने हरिमन्दिर के केन्द्र में आदि बीड़ की स्थापना करके बीड़ को प्रकाशमान किया और स्वयँ एक याचक के रूप में बीड़ के सम्मुख खड़े होकर अरदास (प्रार्थना) की। तद्‌पश्चात बाबा बुड्‌ढा जी से कहा कि आदि बीड़ (ग्रन्थ साहब) के लगभग मध्य से कोई भी शब्द पढ़े अर्थात वाक् ले। बाबा जी ने गुरू आदेश के अनुसार आदि ग्रन्थ साहब से हुक्मनामा लिया –

संता के कारजि आपि खलोइआ हरि कमु करावणि आइआ राम
धरति सुहावी तालु सुहावा, विचि अंम्रित जलु छाइआ राम।।
अंम्रित जलु छाइआ पूरन साजु कराइआ सगल मनोरथ पूरे।।
जै जैकारु भइआ जग अंतरि लाथे सगल विसूरे।।
पूरन पूरख अचुत अबिनासी जसु वेद पुराणी गाइआ।।
अपना बिरदु रखिआ परमेसरि नानक नामु धिआइआ। सूही, महला 5वां प ष्ठ 783

जब सभी औपचारिकताएं सम्पूर्ण हो गई तो गुरूदेव जी ने समस्त संगत को आदेश दिया कि वे सभी 'आदि ग्रन्थ' के समक्ष नतमस्तक हो और घोषणा की कि यह ग्रन्थ समस्त मानव समाज के लिए कल्याणकारी है और अध्यात्मिक उत्थान में सहायक है। इस ग्रन्थ में किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया गया है। जो भी मनुष्य हृदय से पढ़ेगा, सुनेगा अथवा विचार करेगा, वह सहज ही इस सँसार रूपी भव सागर से पार हो जाएगा। अतः आज से समस्त संगत ने 'गुरू शब्द' के भण्डार 'आदि ग्रन्थ' साहब का सब से अधिक सम्मान करना है। यह शरीर तो नाशवान है और समय की सीमाओं में बँधा है किन्तु 'शब्द गुरू' देश, काल और शारीरिक एवं मानसिक आवश्यकताओं से ऊपर है। वास्तव में 'गुरू' में और 'ग्रन्थ' के ज्ञान में कोई अन्तर नहीं है क्योंकि सिद्धान्त है 'नाम' और 'नामी' व्यक्ति में जैसे कोई अन्तर नहीं होता, ठीक उसी प्रकार 'शब्द रूपी गुरू' दिव्य ज्योति के तुल्य आदर के पात्र है। समस्त संगत आगामी जीवन में 'गुरू शब्द' की ओट ले भले ही शोक हो अथवा हर्ष हो। आप जी ने 'आदि बीड़ ग्रन्थ साहब' की सेवा का कार्यभार तब तक बाबा बुड्‌ढा जी को देकर मुख्य ग्रंथी की पदवी से सुशोभित कर सौंप दिया, जब तक कुछ नये सेवकों को प्रशिक्षित नहीं किया जाता।

दिन भर संगत का ताँता दर्शनार्थ लगा रहा। जब रात्रि हुई तो बाबा बुड्‌ढा जी ने गुरूदेव जी से आज्ञा मांगी कि अब इस समय आदि बीड़ को किस स्थान पर विश्राम के लिए ले जाये। तो आप ने कहा कि 'ग्रन्थ' का सुखासन स्थान हमारा निजी विश्राम स्थान ही होगा। ऐसा ही किया गया। गुरूदेव जी ने उस दिन से 'आदि ग्रन्थ' की बगल में फर्श पर अपना बिस्तर लगवा लिया और आगामी जीवन में वह ऐसा ही करते रहे।

आदि बीड़ (गुरू ग्रन्थ) साहेब की विशेषता

श्री हरि मन्दिर साहब में श्री गुरू अर्जुन देव जी द्वारा गुरूवाणी का भण्डार 'आदि बीड़ साहेब' की विधिवत स्थापना कर दी गई है यह समाचार प्राप्त होते ही श्रद्धालुओं का विशाल जनसमूह दर्शनार्थ उमड़ पड़ा। श्री गुरू अर्जुन देव जी दरबार सजाते और कीर्तन के पश्चात् कथा प्रवचन करते। आपने श्रद्धालुओं की जिज्ञासा शान्त करने के लिए 'आदि ग्रन्थ' की विशेषताएँ बताते हुए संगत को सम्बोधन करते हुए कहा – हम लम्बे समय से महसूस कर रहे थे कि भविष्य में उनके अनुयायियों में धार्मिक सिद्धान्तों को लेकर मतभेद कभी भी हो सकता है, अतः हमने इस बात को मद्दे नजर रखते हुए यह आवश्यक समझा कि समस्त मानवता को एक सूत्र में बांधने के लिए श्री गुरू नानक देव जी की गई विचारधारा और सिद्धान्त निश्चित कर दिये जाये ताकि कालान्तर में किसी भी प्रकार का भ्रम उत्पन्न ही न हो। जैसे कि आप सभी जानते ही हैं कि कुछ डम्मी (नकली) गुरू, पूर्व गुरूजनों की वाणी का दुरूपयोग करके व्यक्तिगत लाभ उठा रहे हैं और बाणी के अर्थों का अनर्थ करके स्वार्थ सिद्धि करते हैं। अतः हमने समय रहते पूर्व गुरूजनों तथा उन सभी पूर्ण पुरूषों की बाणी, जिन का आशय एकमात्र निर्गुण निराकार ब्रह्म की उपासना ही है, एकत्रित करके यह ग्रन्थ तैयार कर दिया है। इस ग्रन्थ की विशेषता यह है कि इसकी वाणी मानव मात्र में बन्धुत्व भावना उत्पन्न करेगी क्योंकि

इस वाणी का मूल उद्देश्य मानवीय मूल्यों को प्राथमिकता देना है और समस्त विश्व को एक सूत्र में बांधना है। हमारा द ढ़ विश्वास है–

सरब धरम महि स्रेसट धरमु।
हरि को नामु जपि, निरमल करमु।

गुरूदेव जी ने कहा – जैसे कि सर्वविदित है कि यह वाणी सभी प्रकार के साम्प्रदायिक जाति–पाति के बंधनों से मुक्त केवल और केवल ब्रह्मज्ञान है। इसलिए समस्त संगत का ग्रन्थ साहिब से गुरू–शिष्य का नाता बनता है। इस वाणी में कोई गीत अथवा कोई कहानी नहीं, यह तो केवल ब्रह्म विचार है। अतः यह सम्पूर्ण वाणी लोक भाषा में संग्रह की गई है। जिससे प्रत्येक श्रेणी अथवा वर्ग के जिज्ञासु स्वयँ अध्ययन करके सीधा लाभ उठा सके। आप इस वाणी में आश्चर्यजनक आधुनिकता पायेंगे जो कि समय की कसौटियों पर खरी उतरेगी क्योंकि इस में सर्वमान्य सत्य तथ्यों पर आधारित 'सत्य' का ही गुणगान है।

आप जी ने कहा – मनुष्य चाहे किसी देश, नस्ल अथवा सम्प्रदाय से सम्बन्धित हो, आस्तिक प्रव त्ति का न होकर नास्तिक ही हो, वह चाहे तो इस आदि ग्रन्थ से मार्गदर्शन पा सकता है, क्योंकि इस ग्रन्थ की वाणी सहिष्णुता से ओत–प्रोत है इसमें किसी भी प्रकार की संकीर्णता का कोई स्थान नहीं है। अर्थात इस ग्रन्थ की वाणी में किसी प्रकार के भेदभाव को कोई स्थान नहीं दिया गया। यदि कोई जिज्ञासु भक्तिभाव से इस वाणी को पढ़ेगा, सुनेगा अथवा सुनायेगा तो वह अवश्य ही अपने मन में शान्ति का अनुभव करेगा, जिससे उसका कल्याण होगा।

सार

जैसे कि सर्व विदित है अन्य सम्प्रदायों के ग्रन्थ उन महापुरूषों ने स्वयँ तैयार नहीं किये, सभी ग्रन्थों की रचना कालान्तर में उनके अनुयायियो द्वारा की गयी है। अतः उनकी प्रमाणिकता पर संदेह किया जा सकता है किन्तु गुरूदेव जी ने समय रहते स्वयँ गुरमत सिद्धान्तों का मानव समाज के उत्थान के लिए वाणी का संग्रह कर ग्रन्थ तैयार करवाया है। जिससे भविष्य में गुरूमत सिद्धान्त पर कोई मतभेद उत्पन्न होने की सम्भावना न रहे। इसके साथ ही गुरुदेव जी ने संगत को सतर्क किया था कि जैसा कि आप जानते हैं कि आदि ग्रंथ की प्रतिलिपि तैयार करते समय कुछ लिखने वालों ने मनमानी करते हुए नये ग्रन्थ में कुछ रचनाएं अपनी ओर से भी लिख दी थी जो कि प्रमाणिक नहीं थी। यही कारण है कि भाई बन्नो वाला ग्रन्थ स्वीकार्य नहीं है। क्योंकि कालान्तर में बहुत से तथाकथित विद्वान ऐसा करना अपना अधिकार समझने लगते, जिससे ग्रन्थ की प्रमाणिकता ही समाप्त हो जाती। इसलिए उन्होंने सबको वाणी की शुद्धि और मूल लेखन शैली के लिए सावधान किया है। जिससे भविष्य में मूल वाणी में कोई परिवर्तन न हो सके।

जब लग खालसा रहै न्यारा।।
तब लग तेज दीओ मैं सारा।।
जब इह गहै बिपरन की रिति।।
मैं न करूं इन की प्रतीति।।

बिपरन = ब्राह्मण, **पा० 10वीं०**

श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी
का
सचखण्ड गमन

माता साहिब कौर का दिल्ली प्रस्थान

श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने बंदा सिंघ बहादुर को पाँच प्यारों के नेतृत्त्व में दुष्टों को दण्डित करने के लिए भेज दिया। उसके पश्चात् ही आपने एक दिन अपनी पत्नी साहिब कौर जी को सुझाव दिया कि आप दिल्ली वापिस सुन्दरी जी के पास चली जाएं। इस पर उन्होंने बहुत आपत्ति की और पूछा, "आप ऐसा क्यों कह रहे हैं जब कि आप जानते हैं मैं आपकी सेवा और दर्शनों के बिना रह नहीं सकती।" उत्तर में गुरूदेव जी ने उन्हें बताया कि मेरा अन्तिम समय निकट है, मैं जल्दी ही सँसार से विदा लेने वाला हूँ। यह सुनकर उनको बहुत दुःख हुआ किन्तु उन्होंने प्रश्न किया, "आप तो स्वस्थ युवावस्था में हैं और अभी आप की आयु क्या है?" उत्तर में गुरूदेव जी ने उनको रहस्य बताया। प्रकृति के नियमानुसार समस्त शरीरधारियों को एक न एक दिन सँसार त्याग कर परलोक गमन करना ही होता है, भले ही वह पराकर्मी पुरूष हो अथवा चक्रवर्ती सम्राट, अतः इस नियम के बँधे हमें जाना ही है। इस में अल्प आयु, दीर्घ आयु का प्रश्न नहीं हैं। जब श्वासों की पूंजी समाप्त होती है

तो कोई कारण प्रकृति बना देती है। किन्तु साहिब कौर जी इस उत्तर से संतुष्ट नहीं हुई। वह फिर से पूछने लगी कि आप के शरीर त्यागने का क्या कारण होगा? इस पर गुरूदेव जी ने उन्हें समझाते हुए कहा – मेरे साथ एक दुर्घटना होने वाली है बस वही कारण ही मेरे लिए वापिस प्रभु में विलीन होने के लिए पर्याप्त होगा किन्तु भावुकता में साहिब कौर जी ने पुन: प्रश्न किया। आप तो समर्थ पुरूष हैं। इस अनहोनी को टाला नहीं जा सकता अथवा इसके समय में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। उत्तर में गुरुदेव जी ने कहा – प्रकृति के कार्यो में हस्तक्षेप करना उचित नहीं होता भले ही यह हमारे लिए सम्भव है किन्तु हमें प्रकृति के नियमों के अनुसार चलना ही शोभा देता है। उदाहरण के लिए द्वापर युग में श्री कृष्ण जी जानते थे कि उनकी हत्या एक शिकारी द्वारा भूल से की जाएगी किन्तु वह उसके लिए तैयार थे और सामान्य बने रहे। ठीक इसी प्रकार हम प्रभु लीला में विचरण करते हुए शरीर त्यागेगें। उन दिनों पँजाब से बाबा बुड्ढा जी के पोते भाई राम कुंवर जी तथा उनकी माता गुरूदेव जी के दर्शनों के लिए नांदेड़ आये हुए थे। जब वे पँजाब लौटने लगे तो गुरूदेव जी ने अपनी पत्नी साहिब कौर जी को उनके काफिले के साथ दिल्ली भेज दिया।

सम्राट द्वारा बहुमूल्य नगीना भेंट

श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी को सम्राट बहादुर शाह राजपुताने से लौटते समय नांदेड़ नगर में मिलने आया। उस समय गुरुदेव जी गोदावरी नदी के तट पर एक रमणीक स्थल पर विश्राम कर रहे थे। बहादुरशाह ने गुरूदेव जी को एक बहुमूल्य नगीना भेंट किया। गुरूदेव जी ने नगीना उठाकर बड़ी बेपरवाही से गोदावरी नदी में फेंक दिया। इस पर बादशाह ने महसूस किया कि गुरूदेव उस से नाराज़ है, इस लिए उन्होंने मेरी भेंट स्वीकार नहीं की। क्योंकि मैंने अपना दिया हुआ वचन पूरा जो नहीं किया। इस प्रकार वह गुरूदेव जी से कहने लगा, 'क्षमा करें! मैं आपकी नाराज़गी को समझता हूं वास्तव में आप ने जो कार्य मुझे सोंपा था वह इस समय इतना कठिन है कि यदि मैं उस वचन के अनुकूल आचर्ण करता हूं तो देश में बगावत फैल सकती है अत: मैं आपकी आज्ञा का पालन नहीं कर सका। इस लिए मैं आप से क्षमा याचना करता हूं।' तब गुरूदेव जी ने कहा–'जो हम तुम्हें कहना चाहते थे वह बात तुमने स्वयं ही कह डाली है। वास्तव में शरहा के बंधनों में बंधे हुए काज़ियों, मौलानों से तुम डर गये हो। अत: अब तेरी बादशाही केवल तुम्हारे जीवन तक ही रहेगी उसके पश्चात राज्य का तेज–प्रताप धीरे–धीरे कम होता ही चला जाएगा। और जल्दी ही छिन्न–भिन्न हो जायेगा। अब हम अपना यह कार्य अपने किसी बन्दे से करवा लेंगे।' तभी गुरूदेव जी ने उस का उदास चेहरा देखकर प्रश्न किया कि क्या नगीना वापिस चाहते हो? बादशाह ने कहा– हाँ। गुरूदेव जी ने उसे कहा नदी के पानी में उतर जाओ और वहाँ से अपना नगीना छाँट कर ले आओ। बादशाह ने पूछा कि आपकी बात का क्या तात्पर्य है? क्या वहाँ और भी नगीने हैं। गुरूदेव जी ने कहा – गोदावरी हमारा खजाना है, हमने तुम्हारी भेंट अपने खजाने में जमा कर दी थी किन्तु तुम्हें संदेह हो गया है। अत: स्वयँ ही अपने वाला नगीना चुनकर ले आओ। बहादुरशाह वचन मानकर नदी में उतरा और नदी की रेत में अनेकों नगीने देखने लगा। उसने कुछ एक को पानी से बाहर निकाल कर ध्यान से परीक्षण किया। वह सभी एक से एक बढ़ कर सुन्दर और अद्भुत थे। यह आश्चर्यजनक कौतुहल देखकर स्तब्ध रह गया और उसने सभी नगीने वापिस नदी में पुन: फैंक दिये और लौट कर बार बार नमस्कार करने लगा।

धनुर्विद्या की प्रतियोगिता का आयोजन

एक दिन नांदेड़ में गुरूदेव जी का दरबार सजा हुआ था। तभी सम्राट उन से अपने वरिष्ठ अधिकारियों सहित मिलने आया। गुरूदेव जी से कुछ अधिकारीगण अनुरोध करने लगे, 'हे पीर जी ! हमने आपकी तीर अंदाजी की बहुत महिमा सुनी है। हमें भी प्रत्यक्ष यह करतब दिखाकर कृतार्थ करें।' गुरूदेव जी ने उनका अनुरोध स्वीकार करते हुए एक विशाल प्रतियोगिता के आयोजन की घोषणा करवा दी, जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के योद्धाओं को धनुर्विद्या के जौहर दिखवाने का शुभ अवसर प्रदान किया जाएगा। बस फिर क्या था। स्थानीय प्रशासन की तरफ से कुछ अच्छे तीर अंदाजों को भेजा गया। कुछ आसपास के क्षेत्रों से आदिवासी भी आये। कुछ सम्राट की सैनिक टुकड़ियों के जवान भी इस प्रतियोगिता में भाग लेने आये। गुरूदेव जी ने एक विशाल मैदान में निशानदेही करवा दी और लक्ष्य भेदने के लिए कठपुतलियाँ निश्चित दूरी पर रखवा दी। निश्चित समय प्रतियोगिता प्रारम्भ हुई किन्तु दूर के लक्ष्य को भेदने में सभी असफल हुए। अन्त में गुरूदेव जी ने दूर के लक्ष्य को भेद कर सभी की जिज्ञासा शान्त कर दी। इस प्रतियोगिता में बहुत से बाण चालकों को पुरस्कृत किया गया जिसमें स्थानीय शासक फिरोज़खान की सेना के दो जवान भी थे। इनके तीर लक्ष्य के लगभग निकट गिर रहे थे। गुरूदेव जी इन पर बहुत प्रसन्न हुए और इन को पाँच पाँच मोहरें (स्वर्ण मुद्राएं) प्रदान की और उनका परिचय प्राप्त किया। इन दोनों सैनिकों ने गुरूदेव जी को बताया कि वह आपस में भाई हैं जो कि पँजाब के पठान कबीलों से सम्बन्ध रखते हैं और उसका नाम गुलखान तथा उसके भाई का नाम अताउल्ला ख़ान है। इस पर गुरूदेव जी ने कहा – तुम किसी बहुत बड़े योद्धा पिता के पुत्र प्रतीत होते हो? उत्तर में गुलखान ने बताया कि वह सैदेख़ान के सुपुत्र और पैंदे ख़ान के पोते हैं जो कभी समस्त देश में शूरवीर गिना जाता था। यह सुनकर गुरूदेव जी ने कहा – ''वही तो नहीं जो हमारे दादा जी द्वारा रणक्षेत्र में मार दिया गया था।'' वह कहने लगे– 'आपने ठीक पहचाना, हम उसी योद्धा के पोते हैं। हमारे पिता भी सरहिन्द के राज्यपाल की सेना में थे जो कि आनन्दपुर के युद्ध में आपके हाथों वीर गति पा गये हैं।' उनका बिना छल–कपट के सहज भाव का उत्तर सुनकर गुरूदेव जी बहुत प्रसन्न हुए और पूछने लगे– 'तुमको उनकी मृत्यु का कोई मलाल तो नहीं।' वह बोले – 'नहीं गुरूदेव जी। आपने तो उनको रण भूमि में मारा है, वीर योद्धा वही होता है, जो रणक्षेत्र में दो हाथ देखता है, दो दिखाता है। इसमें मलाल कैसा?' फिर उन्होंने बताया कि हमारी माता जी हमारे साथ हैं। वह हमें प्राय: बताती रहती है कि हमारे

दादा पैंदे ख़ान को आपके दादा श्री गुरू हरगोबिन्द जी ने अपने बेटों की तरह पाला था। जब वह रणक्षेत्र में गुरू जी के हाथों मारे गये तो गलती उन्हीं की थी। आप पीर लोग हैं आपके लिए सभी एक समान हैं। आप किसी से शत्रुता नहीं रखते। इसलिए कई बार हम आपके प्रवचन सुनने आपके सम्मेलनों में आते रहते हैं। गुरूदेव जी सन्तुष्ट हुए और उन्होंने कहा – ठीक है तुम लोग हमारे यहाँ आते रहा करो क्योंकि एक योद्धा दूसरे योद्धा की कद्र करता है। इसलिए हमारे दिल में तुम्हारी कद्र है। इस प्रकार यह दो पँजाबी पठान गुरूदेव जी के शिष्य रूप में गुरू देव के निवास स्थल पर आने जाने लगे।

श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी पर घातक आक्रमण

गुरूदेव जी इन पंजाबी पठान भाईयों को शस्त्र विद्या में निपुण करने के लिए अभ्यास करवाते और विशेष गुर सिखाते। किन्तु यह सब गुरूदेव जी के निकटवर्ती सिक्खों को भला नहीं लगा। भाई दया सिंह जी ने गुरूदेव जी को सतर्क किया कि यह शत्रु पक्ष के व्यक्ति हैं, कभी भी अनिष्ट कर सकते हैं। आप इनको बढ़ावा न दें। परन्तु गुरूदेव जी ने उत्तर दिया– 'सब कुछ उस प्रभु के नियम के अनुसार ही होता है। हम विधाता के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं कर सकते, बस यही हमारा विश्वास है।'

एक दिन स्थानीय प्रशासन ने बकरीद के त्यौहार पर शस्त्र विद्या की प्रतियोगिता का आयोजन किया। जिसमें दोनों पँजाबी पठान भाई विजयी हुए। इन भाइयों के प्रतिद्वन्द्वियों ने जो कि इन से बहुत ईर्ष्या करते थे, स्थानीय सैनिकों के साथ मिलकर इन दोनों पर बहुत भद्दे व्यंग्य किये – कहने लगे कि जो व्यक्ति तुम्हारे पिता–पितामय का हत्यारा है, तुम उसके शिष्य हो, तुम्हें तो डूब मरना चाहिए। पठान कहलाते हो और अपने पुरखों का बदला भी नहीं ले सकते कैसे योद्धा हो? हमें तो तुम नपुंसक प्रतीत होते हो, इत्यादि। यह कटाक्ष इन भाइयों के हृदय को छलनी कर गया। गुलखान इस प्रकार आवेश में आ गया और वह भावुकता में एकान्त पाकर गुरूदेव जी पर कटार से वार कर बैठा। उस समय गुरूदेव जी विश्राम मुद्रा में लेटे ही थे। गुरूदेव जी ने उसी क्षण अपनी कृपाण से गुलखान को दो टुकड़ों में काट दिया। आहट पाते ही संतरी सावधान हुआ और उसने बाहर से भागते हुए गुलखान के छोटे भाई अताउलाखान को दबोच लिया। उसने सारा भेद बता दिया। किन्तु जब सिक्खों ने गुरूदेव जी का गहरा घाव देखा तो मारे क्रोध के उसे भी वहीं उसी समय मृत्यु दण्ड दे दिया। गुरूदेव जी के वस्त्र रक्तरंजित हो गये थे तुरन्त शल्य चिकित्सक (जर्राह) को बुलाया गया। उसने गुरूदेव जी के घाव को सी दिया और मरहम पट्टी कर दी और पूर्ण विश्राम के लिए परामर्श दिया। यह सूचना सम्राट को भी भेजी गई जो गुरूदेव जी को कुछ दिन पहले ही मिलकर दिल्ली वापिस जा रहा था। उचित उपचार होने से गुरूदेव जी का घाव धीरे धीरे भरने लगा और वह लगभग पुन: स्वस्थ हो गये और साधारण रूप में विचरण करने लगे। उन्हीं दिनों हैदराबाद के कुछ श्रद्धालुओं ने गुरूदेव जी को कुछ विशेष शस्त्र भेंट किये जिनमें एक भारी भरकम धनुष भी था। शस्त्र–अस्त्रों की प्रदर्शनी लगाई गई। इस भारी कमान को देखकर कुछ दर्शकों ने आशंका व्यक्त की कि यह कमान तो केवल प्रदर्शनी की वस्तु है। इस का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि इस कमान का प्रयोग करने वाले योद्धा का अस्तित्त्व ही सम्भव नहीं।

यह बात सुनकर कुछ सिक्खों ने कमान पर चिल्ला चढ़ाने का बार बार प्रयास किया किन्तु वह असफल रहे। यह देख गुरूदेव जी तैश में आ गये। उन्होंने सिक्खों से धनुष ले लिया और उस पर चिल्ला चढ़ा कर जोर से खींचा, जिस कारण अधिक दबाव पेट पर पड़ा और उनके कच्चे घाव खुल गये। रक्त तेजी से प्रवाहित होने लगा। यह अनहोनी देख कर सभी भयभीत हो गये। पुन: उपचार के लिए जर्राह को तुरन्त बुलाया गया। उसने घाव पुन: सी दिये। किन्तु गुरूदेव जी ने कहा कि अब सभी प्रयास व्यर्थ हैं, अब हमारा अन्तिम समय आ गया है और उन्होंने सचखण्ड गमन की तैयारी प्रारम्भ कर दी।

भाई दया सिंह जी का निधन

श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी को जब एक गुलखान नामक पठान ने घायल कर दिया तो सभी सिक्ख तुरन्त क्षण भर में इक्ट्ठे हो गये। भाई दया सिंह जी ने वैद्य को बुलवा लिया, जिसने उपचार आरम्भ कर दिया और जर्राह ने घाव सिल दिया। भाई दया सिंह उस समय निकट खड़े थे। वह गुरूदेव जी के घाव को देखकर सिहर उठे, यह अघात सहन वे नहीं कर सके क्योंकि वह गुरूदेव जी से अति स्नेह करते थे। उनको बहुत शोक हुआ। वह शान्तचित गुरूदेव जी के पलंग के निकट ही विराज गये। वह गम्भीर चिन्ता में थे कि उनको मानसिक आघात हुआ और उसी के कारण उनकी हृदयगति रूक गई और वह शरीर त्याग गये। गुरूदेव जी की आज्ञा से उनकी अंत्येष्टि क्रिया वही सम्पन्न कर दी गई।

ग्रंथ साहब को गुरू पदवी प्रदान की

गुरूदेव जी के आदेश पर तुरन्त दीवान सजाया गया। उस समय गुरूदेव जी से गुरूपरम्परा के आगे बढ़ने के सम्बन्ध में पूछा गया। गुरूदेव जी ने वहाँ एकत्रित शोकाकुल संगत को सांत्वना देते हुए समझाया कि जैसे मनुष्य की मृत्यु के बाद भी उसकी आत्मा बनी रहती है, ठीक वैसे ही गुरूजनों के जाने के पश्चात् भी उनकी पावन वाणी उनकी आत्मा के रूप में हमारे पास विद्यमान है। भविष्य में खालसे को उसी वाणी से दिशा–निर्देश प्राप्त करने हैं और शब्द रूप में ही गुरू को पहचानना है। इस प्रकार गुरूदेव जी ने उसी समय दमदमे वाली ग्रंथ साहब की 'बीड़' (पोथी) का प्रकाश करने का आदेश दिया। स्वयँ बहुत धैर्य और शान्ति के साथ अपने निवास में गये। वहाँ उन्होंने साफ–सुथरी और सुन्दर पोशाक धारण की, लौट कर ग्रंथ साहब के सम्मुख खड़े होकर सभी संगत में सम्मिलित होकर अकालपुरूष को सम्बोधन कर अरदास की और ग्रंथ साहब को दण्ड्वत प्रणाम किया। तत्पश्चात गुरू परम्परा अनुसार ग्रंथ साहब की चार परिक्रमा की और कुछ सामग्री एक थाल में रख कर ग्रंथ साहब को भेंट किया। इस प्रकार सभी विधिवत गुरू मर्यादा सम्पूर्ण करते हुए उन्होंने गुरू पदवी ग्रंथ साहब को दे दी। इस प्रकार ग्रंथ साहब को गुरूआई प्रदान कर दी गई और आदेश दिया कि आज के पश्चात् देहधारी गुरू की परम्परा समाप्त की जाती है।

कुछ सिक्खों ने गुरूदेव जी से प्रश्न किया कि यदि आपके दर्शनों की अभिलाषा हो तो कैसे किये जायें? गुरूदेव जी ने स्पष्ट किया

कि मेरी आत्मा ग्रंथ साहब में शरीर पंथ में विद्यमान रहेगा। किन्तु सिक्खों ने कुछ और विस्तृत जानने के लिए अन्य प्रश्न किये। एक सिक्ख ने प्रश्न किया कि सदैव पंथ के दर्शन कर पाना कठिन कार्य है क्योंकि विपत्तियों में खालसे का मिल बैठ पाना सम्भव नहीं लगता। ऐसे में आपके दर्शन कैसे होंगे? गुरूदेव जी ने समाधान बताया, जहाँ विकट परिस्थितियाँ हो तो केवल पाँच प्यारों के दर्शन मेरे दर्शन होंगे। यदि ऐसा भी सम्भव न हो तो स्वयँ तैयार होकर, पूर्ण शस्त्र धारण कर लेना और दर्पण में स्वयँ को निहारना, मेरे दर्शन होंगे। यदि किसी कारणवश हमारी आवश्यकता पड़े तो हमारे स्थान पर, पाँच तैयार-बर-तैयार सिक्ख पाँच प्यारे रूप होकर हमारा प्रतिनिधित्व करेंगे।

सचखण्ड गमन

गुरूदेव जी ने सिक्खों को एक विशेष तम्बू में चिता तैयार करने का आदेश दिया। जब चिता तैयार हो गई तो स्वयँ नित्य की भान्ति अपना कमर-कस सजाया। धनुष-बाण कन्धे पर रखा और बंदूक को दाहिने हाथ में पकड़ कर घोड़े पर सवार हो गये। जैसे शिकार खेलने चले हो किन्तु उन्होंने समस्त सिक्खों को अन्तिम बार 'वाह गुरू जी का खालसा, वाह गुरू जी की फतह' कह कर अन्तिम विदाई ली। फिर उस तम्बू की तरफ चल पड़े। जहाँ उन्होंने अपने लिए चिता सजवाई हुई थी। तम्बू के अन्दर किसी को जाने की आज्ञा नहीं दी। वहाँ घोड़े से उतर कर वे अन्दर गये। सिक्ख शोक और आश्चर्य में डूबे हुए मूर्ति की भान्ति खड़े रहे। गुरूदेव जी ने समाधि लगाई और चिता पर लेट गये। इस तरह वे ज्योतिजोत समा गए।

जाते हुए कह गये कि कोई उनकी यादगार न बनवाये। उनकी याद का असली स्थान तो सिक्खों का हृदय ही होना चाहिए। किन्तु खालसा उनके परोपकारों को कैसे भूल सकता था। बाद में गुरूदेव जी की याद में एक थड़ा (चबूतरा) बना दिया गया।

खालसा अकाल पुरख की फौज ।
प्रगटियो खालसा परमात्म की मौज ।।

नोटः-

कुछ एक इतिहासकारों का व्यक्तिगत विचार है कि हो सकता है कि सरहिन्द के राज्यपाल वज़ीद खान ने गुरुदेव पर घातक हमला करने का षड्यन्त्र रचा हो जिस में उसने इन पठान भाईयों की सहायता ली हो!